# सूरसागर में निहित वात्सल्य रस

* श्रीमती फेदोरा बरवा

शोध पत्र –हिन्दी

छोटे बच्चों के प्रति जो सभी का स्नेह होता है, उसका काव्य में वर्णन वात्सल्य रस के रूप में होता है। वात्सल्य 'वत्स' का व्युत्पादित शब्द है। यह माता–पिता का संतान के प्रति जो स्नेह होता है उसका प्रतिनिधित्व करता है। इस स्नेह के लिए स्थिति की, धन की, पद की या किसी बात की अपेक्षा नहीं होती है। यह तो सहज भावाभिव्यक्ति है जो सभी रूपों में समान गति से प्रवाहित होती है। इसी वात्सल्य रस का सूरदास के सूरसागर में विस्तृत वर्णन है।

सूरसागर में सूरदास ने अपने इष्ट भगवान कृष्ण के बाल्य के मनोरम चित्रों का चित्रण किया है। सूर के बाल्य वर्णन के अन्तर्गत केवल बाहरी रूपों और चेष्टाओं का ही सूक्ष्म वर्णन नहीं है वरन् उन्होंने कृष्ण के माध्यम से बालकों के अन्तः प्रकृति में भी पूरा प्रवेश किया है और अनेक भागों की सुन्दर, स्वाभाविक व्यंजना की है। वस्तुतः सूरदास का वात्सल्य वर्णन अद्वितीय है। इस संबंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपने सूरदास नामक ग्रन्थ में लिखा है –

''वात्सल्य और श्रृंगार के क्षेत्रों का जितना अधिक उद्‌घाटन सूर ने अपनी बन्द आँखों से किया, उतना किसी अन्य कवि ने नहीं। इन दोनों का कोना–कोना वे झाँक आये। उक्त दोनों रसों के प्रवर्तक रतिभाव के भीतर की जितनी मानसिक वृत्तियों और दशाओं का अनुभव और प्रत्यक्षीकरण सूर कर सके, उतना और कोई नहीं। हिन्दी साहित्य में श्रृगार रस का रस राजत्व यदि किसी ने पूर्ण रूप से दिखाया है तो सूर ने।''[1]

इसी तरह डॉ. रामकुमार वर्मा ने सूर के वात्सल्य रस की विशेषताएँ बतलाते हुए कहा – ''सूर ने शिशु और बाल–जीवन की प्रत्येक भावना का इतना गम्भीर अध्ययन किया है कि वे प्रत्येक परिस्थिति के चित्र बड़ी कुशलता और स्वाभाविकता से उतार सके हैं। उन्होंने बालकृष्ण और माँ यशोदा के हृदयों की भावनाओं को इतने सार्वजनिक रूप से प्रस्तुत किया है कि वे चिरन्तन और सत्य है।''[2]

वात्सल्य रस के पक्ष :–

वात्सल्य रस के दो पक्ष हैं – (1) संयोग वात्सल्य रस (2) वियोग वात्सल्य रस। इन दोनों रूपों की अभिव्यक्ति सूरसागर में हुई है।

संयोग वात्सल्य रस :–

संयोग वात्सल्य रस के अन्तर्गत श्रीकृष्ण के जन्म से लेकर उनके बाल्य अवस्था तक की समस्त मधुर और आनन्दायिनी लीलाओं की अभिव्यक्ति सूरसागर में देखने को मिलती है। जब वसुदेव अपने कृष्ण को गोकुल में नंद और यशोदा को सौंप कर लौट जाते हैं। तब कुछ ही देर में समस्त ब्रजवासियों को यह बात पता चल जाती है कि नंदजी के यहाँ पुत्र हुआ है। समस्त ब्रज में मंगलाचार होने लगे, बधावे बनजे लगे, दान देना आरंभ हो गया। ब्रज की सब स्त्रियाँ अपना काम–काज छोड़कर बालक क भण का मुख देखने की लालसा से नंदजी के घर पहुंच गयी। पुरु ा भी अपना दैनिक कार्य छोड़कर उत्सव मना रहे हैं। स्त्री–पुरूष परस्पर आनन्द भाव से कह रहे हैं –

''आज बन कोऊवै जनि जाई।
ढोटा है रे भयौ महिर कैं, कहत सुनाई–सुनाई।
सबहिं घोष मैं भयौ कोलाहल आनंद उन न समाई।।''[3]

इसी प्रकार आनंदोत्सव में कुछ दिन बीत गये। अब नवजात शिशु के लिए एक छोटे पालने की आवश्यकता हुई। विचार मन में आते ही बढ़ई बुलाया गया और स्वयं माता यशोदा ने अपने पुत्र के लिए एक बड़ा सुन्दर रंगा हुआ पालना बना लाने का आदेश दिया। उनका यह आदेश निश्चय ही मातृ –हृदय में उमड़ते सहज स्नेह का द्योतक है –

''पालनौ अति सुन्दर गढ़ि ल्याउ रे बढ़ैया !
सीतल चन्दन कटाउ धरि खराब रंग लाउ,
विविध चौकी बनाउ धाउ रे बनैया।''[4]

बालक कृष्ण एक दिन इसी पालने पर पड़ा था। उसने हाथ से पैर का अंगूठा पकड़कर मुंह में दे लिया। यह दृश्य अत्यन्त स्वाभाविक एवं आनंद की अनुभूति वाला है, नित्यप्रति पालने में पड़े बालक अंगूठा चूसा करते हैं। सूरदास ने इस

रस का वर्णन सूर सागर में करते हुए लिखा है –

''कर पग गहि अँगुठा मुख मेलत।
प्रभु पौढ़े पालनैं अकेले हरिष–हरषि अपनैं रँग खेलत।''[5]

इसी प्रकार आनंद में मग्न बालक कृष्ण एक दिन पालने में पड़ा–पड़ा उलट गया है तो यह बिलकुल साधारण बात, परन्तु माता के हृदय में इससे जो आनंद की अनुभूति होती है, वह सूर की दृष्टि से बच न सकी। उन्होंने माता यशोदा की प्रसन्नता का वर्णन इन पंक्तियों में किया हैं –

''महरि मुदित उलटाइ कै मुख चूमन लागी।
चिरूजीवौ मेरौ लाड़िलौ मैं भई सभागी।।
एक पाख त्रय मास कौ मेरौ भयौ कन्हाई।
पटकि रान उलटौ परयौ, मैं करौ बधाई।।''[6]

माँ यशोदा और पिता नन्द श्रीकृष्ण के नैसर्गिक सौन्दर्य पर मुग्ध हैं। पालने में सोते समय या करवट बदलते समय सदा उनके रूप–रस का पान करते हुए नहीं थकते हैं –

''ललन हौं या छबि ऊपर वारी।
बल–गोपाल लग्यौ इन नैननि, रोग–बलाई तुम्हारी।
लट लटकनि, मोहन, मसि बिंहुका तिलक भाल सुखकारी।
मनौ कमल–दल सावक पेखत, उड़त मधुप छवि न्यारी।
लोचन ललित, कपोलनि काजर, छवि उपजाति अधिकारी।
सुख मैं सुख औरे रूचि बाढ़ति, हंसत देत किलकारी।
अलप दसन, कलबल करि बोलनि, बुधि नहिं परत विचारी।
विकसित ज्योति अधर बिच, मनौं बिधु मैं विज्जु उज्यारी।
सुन्दरता को पार न पावत रूप देखि महतारी।
सूर सिन्धु की बूँद भई मिलि मति गति दृष्टि हमारी।।''[7]

पालने में झूलते–झूलते एक दिन कृष्ण जमीन पर गिर पड़े और रोने लगे। उस समय यशोदा की आकुलता का जल्दी से दोड़कर पुत्र को गोद में उठा लेना, उसका शरीर सहलाना, दूसरों पर बिगड़ना और फिर उसे पुचकारकर चुप कराना आदि सभी भावों का वर्णन सूर ने किया हैं। बच्चे को सुलाने में माता को जो आनन्द की अनुभूति होती है उस रस का चित्रण इस तरह किया हैं –

''जसोदा हरि पालनैं झुलावै।
हलरावै दुलराई मल्हावै, जोइ–सोई कछु गावै।
मेरे लाल कौं आउ निंदरिया, काहैं न आनि सुवावै।
तू काहैं नहिं वेगहिं आवै, तोकौं कान्ह बुलावै।।''[8]

लोरी सुनते–सुनते बालक कृष्ण सोने लगता है। कुछ नींद–सी आ जाती है। वह आँखें मूंद लेता है। उसे सोता जान माता यशोदा स्वयं तो चुप हो ही जाती है, दूसरों को भी संकेत से चुप रहने को कहती है। परन्तु क्षण भर में ही बालक जाग जाता है और माता यशोदा आनन्द भाव से फिर गाने लगती है –

''कबहूं पलक हरि मूंदि लेत है, कबहूं अधर फरकावै।
सेवत जानि मौन हैं कै रहि, करि–करि सैन बतावै।
ठहिं अन्तर अकुलाइ उठे हरि जसुमति मधुरैं गावैं।।''[9]

माता यशोदा के मन में तरह–तरह की आनन्द की अभिलाषाएँ जाग उठती है। वह आनन्द भाव से सोचती है कि मेरा कृष्ण कब बोलने लगेगा, कब वह चलना सीखेगा। इस प्रकार की अभिलाषा संबंधी कई पद सूरसागर में दृष्टिगोचर होते हैं। एक पद यहाँ दृष्टव्य है –

''जसुमति मन अभिलाष करै।
कब मेरौ लाल घुटुरूवनि रेंगै कब धरनी पग द्वैक धरै।
कब द्वै दंत दूध के देखौं कब तुतरे मुख बैन झरै।।
कब नन्दहिं कहि बाबा बोलै कब जननी कहि मोहिं ररै।
कब मेरौ अँचरा गहि मोहन जोइ सोइ कहि मोसौं झगरै।।

कब धौं तनक तनक कछु खैहै अपने कर सौं मुखहिं भरै।
कब हँसि बात कहैगौ मोसौं जा छबि तैं दुख दूरि हरैं।।''[10]

कुछ समय बीतता है और माता यशोदा की एक–एक अभिलाषाएँ पूरी होती चली जाती है। बालक कृष्ण घुटनों के बल से चलना सीख जाता है। परन्तु अभी तक वह देहरी नहीं लाँघ पाता। एक–आध बार प्रयत्न करने पर जब वह गिर पड़ा, तब माता को यह देखकर बड़ी प्रसन्नता होती है –

''चलत देखि जसुमति सुख पावै।
ठुमुकि–ठुमुकि पग धरनी रेंगत, जननी देखि दिखावैं।
छेहरि लौं चलि जात बहुरि फिरि फिरि इतहीं कौं आवैं।
गिरि गिरि परत बनत नहिं लांघत।।''[11]

जब बालक कृष्ण छः महीने का हो गया है। शुभ दिन पूछकर अन्नप्राशन की तैयारी की गयी है। खूब उत्सव मनाया जा रहा है। तरह–तरह के व्यंजन बनवाकर नन्दजी बालक को गोद में लेकर बैठे है। माता यशोदा ने कृष्ण को स्नान कराकर, सुन्दर वस्त्राभूषण पहनाकर, पहले ही सजा दिया है। ब्रज के सभी स्त्री–पुरूष हर्ष से गा–बजा रहे हैं। अन्नप्राशन का उत्सव होता है सभी सगे संबंधी और मित्र बैठकर आनन्द से भोजन करते हैं।

कुछ दिन बात ही बालक कृष्ण बोलने लगता है। अब तो माता–पिता और ब्रजवासियों की प्रसन्नता देखकर सूरदास भी प्रसन्नता से गा उठते हैं –

''कहन लागे मोहन मैया मैया।
नन्द महर सौं बाबा–बाबा अरू हलधर सौं भैया।।''[12]

अब बालक कृष्ण और बड़ा होता है। अब उसे पैरों चलना आ गया है। परन्तु नहाने से उसे अब भी चिढ़ है। माता उसे नहलाने के लिए फुसला रही है। लेकिन वह तो हाथ पकड़ते ही रोने लगता है। बालक को बहलाने के लिए माता नहलाने का सामान छिपाकर रख लेती है और दही माखन देने का बहाना करके पूछती है क्यों रोता है ? हम तो तुझे माखन देने के लिए बुला रही है। परन्तु बालक कृष्ण इतना बुद्धिमान है कि माता के बहकावे में नहीं आता। वह समझ जाता है कि माता किसलिए बुला रही है और फिर रो देता है। उसके रोने पर भी आनन्द रस की अनुभूति माता यशोदा को होती हैं –

''जसुमति जबहिं कहौं अन्हवावन, रोइ गये हरि लोटत री।
तेल उबटनौ लै आगैं धरि, लालहिं चोटत–पोटत री।
मैं बलि जाउँ न्हाउ जनि मोहन, कत रोवत बिन काजैं री।
पाछैं धरि राख्यौ छपाइ कैं, उबटन–तेल समाजैं री।
महरि बहुत बिनती करि राखति, मानत कहीं कन्हैया री।
सूर स्याम अति ही बिरूझाने सुनि–सुनि अन्त न पैया री।।''[13]

बालक कृष्ण अब दो–तीन वर्ष का हो गया है। पर माता का ही दूध अभी तक पीता है। माता चाहती है कि बच्चे की यह आदत छूट जाय। अतः वही कृष्ण को फुसलाती और लालच देती है अब तू बड़ा हो गया है, तुझे माता का दूध नहीं पीना चाहिए। ब्रज के लड़के तुझे माता का दूध पीते देखते हैं तो हँसी उड़ाते हैं। माता का दूध पीने से तेरे ये अच्छे–अच्छे दाँत बिगड़ जायँगे। कृष्ण इतना सुनके मुँह छिपाकर मुसकराने लगता है –

''जसुमति कान्हहिं यहै सिखावति।
सुनहु स्याम, अब बड़े भये तुम कहि स्तन–पान छुड़ावति।
ब्रज–लरिका तोहिं पीवत देखत, हँसत लाज नहिं आवति।
जैहैं बिगरि दाँत ये आछे, तातैं कहि समुझावति।
अजहूँ छाँड़ि, कहौ करि मेरौ, ऐसी बात न भावति।
सूर स्याम यह सुनि मुसुक्याने, अंचल मुखहिं लुकावत।''[14]

रात्रि में एक दिन माता ने बालक को चन्दा दिखा दिया। बस, कृष्ण उसे लेने के लिए मचल जाता है। आकाश की ओर संकेत करके वह उसे खेलने को माँगता हैं –

''ऐसौ हठि बाल गोविन्दा।
अपने कर गहि गगन बतावत, खेलन कौं माँगै चन्दा।''[15]

चंदा को खेलने के लिए माँगने में तो कोई हानि नहीं हैं, पानी में उसकी छाया से बालक खेल सकता है। पर बालक कृष्ण को तो मचलने के लिए कुछ बहाना चाहिए। अतः वह कहता है मैं तो इसे खाऊँगा। यही नहीं, माता को वह धमकाता है

और धौंस भी देता है – चंदा नहीं देगी तो मैं धरती पर लोटकर अपने वस्त्र गंदे कर लूँगा, तेरी गोद में नहीं आऊँगा, दूध नहीं पीऊँगा, चोटी नहीं कराऊँगा। धौंस की ये बाते तो साधारण हैं, सबसे बड़ी धमकी उसकी यह है कि चंदा न मिलने पर मैं तेरा पुत्र न रह कर बाबा नंद का पुत्र बन जाऊँगा। उसके हट में भी आनन्द रस की अनुभूति होती हैं –

''मैया, मैं तो चन्द खिलौना लैहौं।
जैहौं लोटि धरनि पर अबहीं, तेरी गोद न ऐहौं।
सुरभी कौ पय पान न करिहौं, बेनी सिर न गुहैहौं।
हैं हौं पूत नन्द बाबा कौ, तेरौ सुत न कहैहौं।''[16]

अब माता यशोदा सोचती है कि बालक का यह हठ पूरा तो किया जा नहीं सकता, अतः उसे बहलाया कैसे जाय कि वह रोना–धोना छोड़कर प्रसन्न हो जाय। तब यशोदा पुत्र को फुसलाने के लिए कहती हैं –

''अनहोनी कहूं भई कन्हैया, देखी सुनी न बात।
यह तो आहि खिलौना सबकौ, खान कहत तिहिं तात।
यहै देत लवनी नित मोकौं, छिन–छिन साँझ–सकारे।
बर–बार तुम माखन माँगत, देउँ कहाँ तैं प्यारे।।''
मधु–मेवा–पकवान–मिठाई, माँगि लेहु मेरे छौना।
चकई–डोरि, पाट के लटकन, लेहू मेरे लाल खिलौना।।''[17]

एक दिन बालक कृष्ण ने ग्वालों को दूध दुहते देखकर हठ करना शुरू किया – मैं भी दूध दुहूँगा। दूध दुहने के लिए वह जो हठ कर रहा है, उसका कारण बर्तन में पड़ने वाली धार की आवाज है। दूध की धार का बर्तन में वजना बालक कृष्ण को अत्यंत प्रिय है। अतः वह स्वयं गाय का दूध दुहकर धार को वैसे ही बजाना चाहता है। संध्या के समय अपने पिता के पास जाकर वह कहता हैं –

''मैं दुहिहौं मोहिं दुहन सिखावहू।
कैसे गहत दोहनी घुटुवनि, कैसे बछरा थन लै लावहू।
कैसैं लैं नोई पग बाँधत, कैसें लै गैया अटकावहु।
कैसैं धार दूध की बाजति सोई–सोई विधि तुम मोहिं बतावहु।''[18]

कृष्ण साथियों के साथ खेलने लगा। इस समय उसकी अवस्था छह–सात वर्ष की है। एक दिन उसने अपने साथियों से माखन–चोरी का प्रस्ताव किया क्योंकि माखन चोरी में भी आनन्द (रस) की अनुभूति बालक क  भण एवं सखाओं को होती हैं –

''करैं हरि ग्वाल संग विचार।
चेरि माखन खाहु सब मिलि करहु बाल बिहार।''[19]

सब सखा बालक कृष्ण के मुख से यह बात सुनकर आश्चर्य करने लगे इसलिए नहीं कि ब्रजाधिपति कुमार चोरी का प्रस्ताव कर रहा है, प्रत्युत इसलिए कि उसने अपनी चतुर बुद्धि से एक ऐसा नवीन ढंग खोज निकाला है, जिससे मनोरंजन होगा और साथ ही बढ़िया–बढ़िया दही और माखन भी खाने को मिलेगा। सब सखा ताली बजाने लगे और प्रसन्नता से कहने लगे –

''यह सुनत सब सखा हर  ो, भली कही कन्हाई।
हँसि परस्पर देत तारी, सौंह करि नँदराइ।
कहाँ तुम यह बुद्धि पाई स्याम चतुर सुजान।।''[20]

अब कृष्ण अपने साथियों के द्वारा गोपियों के घर में माखन–चोरी करने लगे। शुरू–शुरू में तो गोपियाँ चुप रही किन्तु जब वह माखन चोरी के साथ–साथ उनके बर्तन फोड़ने लगा तब गोपियां खीझ उठती है और गोपियों को यशोदा के पास जाकर उलाहना देने के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय नहीं सूझता। पर माता कैसे विश्वास कर ले कि मेरा छोटा–सा बालक इतने उत्पात कर सकता है ? अतः माता यशोदा अपने पुत्र का पक्ष लेकर गोपियों को झूठा बताने लगी। पर जब उलाहने आने लगे, तब एक दिन बहुत खींझ कर उसने बालक की खबर लेने की ठानी। घर में घुसते ही यशोदा ने छड़ी लेकर कृष्ण को धमकाते हुए पूछा – कहाँ गया था तू ? चोरी करता फिरता है, पिता की नन्हाई करने पर तुला है ? अच्छा सपूत पैदा हुआ है तू ! अब तक तो छोड़ दिया, आज खबर लूँगी तेरी ऐसा करते हुए भी उसे एक तरह से आनन्द ही मिलता हैं –

''कन्हैया, तू नहिं मोहित डरात।
भाटरस धरे छाँड़ि, कत पर घर, चोरी करि–करि खात।

बकत–बकत तौसौं पचि हारी, नैंकहु लाज न आई।
ब्रज–परगन–सिकदार महर तू, ताकी करन नन्हाई।
पूत–सपूत भयौ कुल मेरैं, अब मैं जानी बान।
सूर स्याम अब लौं तुहिं बकस्यौ, तेरी जानी घात।।''[21]

बालक कृष्ण ने डरते–डरते अपनी तुतलाती भाषा में अत्यन्त भोले बनकर उत्तर दिया। उसके स्पष्टीकरण में माता यशोदा को जो आनन्द की अनुभूति होती है उस भाव को देखिएं –

''मैया, मैं नहिं माखन खायौ।
ख्याल परैं ये सखा सबै मिलि मेरैं, मुख लपटायौ।
देखि तुही सींके पर भाजन, ऊँचे धरि लटकायौ।
हौं जु कहत नान्हें कर अपनैं, मैं कैसैं करि पायौ।
मुख दधि पोंछि, बुद्धि इक कीन्ही, दोना पीठि दुरायौ।
डारि सांटि मुसकाई जसोदा स्यामहिं कंठ लगायौं।''[22]

गोपियाँ भी बालक कृष्ण की बात सुनकर मुसकरा दीं और यशोदा माता ने उसे आनन्द से गले लगा लिया।

एक दिन कृष्ण ने माता से गाय चराने की आज्ञा माँगी। माता ने इसका विरोध किया। सबसे पहला प्रश्न तो प्रतिष्ठा का है ब्रज के स्वामी का पुत्र गाय चराने जायगा। विरोध का दूसरा कारण माता का स्नेह है। सूरदास ने अपने काव्य में इसी दूसरे कारण को प्रधानता दी है। तीसरे, माता को भय है कि कंस के भेजे हुए राक्षस कहीं उसका अनिष्ट न करें। परन्तु कृष्ण के सामने इन तीनों बातों का कोई मूल्य नहीं है। उसने माता के सब तर्को का उत्तर सरलता से दे दिया है। माता और पुत्र दोनों के तर्क में वात्सल्य रस की अनुभूति इस प्रकार दृष्टिगोचर होती है –

''आज मैं गाई चरावन जैहौं।
व न्दावन के भाँति–भाँति फल अपने कर सौं खैहौं।
ऐसी बात कहौ जति बारे, देखौ अपनी भाँति।
तनक–तनक पग चलिहौ कैसे, आवत है है राति।
प्रात जात गैया लै चारन, घर आवत हैं साँझ।
तुम्हरौ कमल बदल कुम्हलैहै रेंगत घामहिं माँझ।
तेरी सौं मोहिं घाम न लागत, भूख नहीं कछु नेक।
सूरदास प्रभु कहौ न मानत, परयौ आपनी टेक।।''[23]

प्रश्न है कि कृष्ण को गाय चराने का आखिर शौक ही क्यों हुआ ? उसके लिए पचीसों और खेल थे, तब उसे गाय चराने में ही क्या लाभ दिखायी दिया ? उसका उत्तर है कि पहले तो मैं अब काफी बड़ा हो गया हूँ, फिर मेरे सभी साथी – रैता, पैता, मना, मनसुखा आदि जब गाय चराने जाते हैं, तो मैं क्यों पीछे रहूँ। हो सकता है गाय चराने में भी आनन्द की अनुभूति होती होगी –

''मैंया हौ गाई चरावन जैहौं।
तू कहि महर नंद बाबा सौं, बड़ौ भयौ न डरैहौं।
रैता, पैता, मना, मनसुखा, हलधर संगहिं रैहौं।
बंसीवट तर ग्वालनि कैं सँग, खेलत अति सुख पैहौं।''[24]

अपनी बात पूरी करते –करते चतुर बुद्धि बालक को माता के स्नेह का ध्यान आ जाता है। वह सोचता है कि माता के विरोध के दो ही कारण हो सकते हैं–एक तो यह कि वन जाने पर मैं भूखा रहूँगा और दूसरा, मैं जाकर यमुना में नहाऊँगा। अतः दोनों शंकाओं का समाधान भी वह स्वयं ही कर देता है –

''ओवन भोजन दै दधि काँवरि, भूख लगे तैं खैहौं।
सूरदास है साखि जमुना जल सौंह देहु जुन हेहौं।।''[25]

माता ने फिर भी जब आज्ञा न दी तो कृष्ण चुपचाप चल दिया। यशोदा भी सतर्क थी। उसने शीघ्रता से जाकर कृष्ण को पकड़ लिया। इस समय बलराम बहुत काम आये। उन्होंने माता से कहा – मेरे साथ इसे जाने दे, आज जल्दी लौट आयेंगे। यशोदा को जल्दी में कोई उत्तर न सूझा। बेमन से माता ने पुत्र का हाथ छोड़ते हुए बलराम से कहा – इसको देखे रहना। कृष्ण को जाने की आज्ञा देने में भी स्नेह का भाव हैं –

''चले सब गाई चरावन ग्वाल।

हेरी टेर सुनत लरिकनि की दौरि गए नँदलाल।
फिरि इत–उत जसुमति जो देखै, दृष्टि न परै कन्हाई।
जान्यौ जात ग्वाल सँग दौर्‌यौ, टेरति जसुमति धाई।
जात चल्यौ गैयनि के पाछैं, बलदाऊ कहि टेरत।
पाछैं आवति जननी देखी, फिरि–फिरि इत कौं हेरत।
बल देख्यौ मोहन कौं आवत, सखा किए सब ठाढ़े।
पहुँची आइ जसोदा रिस भरि, दो भुज पकरे गाढ़े।
हलधर कहौ, जान दै मो सँग, आवहिं आज सवारे।
सूरदास बल सौं कहैं जसुमति, देखे रहियौ प्यारे।।''[26]

यशोदा बड़बड़ाती हुई लौट आयी। उसकी खिझलाहट में भी एक प्रकार का आनन्द छुपा हुआ प्रतीत होता है –

''प्रताहिं तैं लागै याही ढंग, अपनी टेक कर्‌यौ हैं।
देखौ जाइ आजु बन कौ सुख, कहा परोसि धर्‌यौ है।''[27]

शाम हुई वन से सभी ग्वाल–बाल लौटे ! उन्होंने कृष्ण को आगे कर लिया है। माता के लिए कृष्ण कुछ फल तोड़कर लाया है। यशोदा दौड़कर उसे छाती से लगा लेती हैं और सूरदास प्रसन्नता से गा उठते हैं –

''जसुमति दौरि लिए हरि कनियाँ।
आजु गयौ मेरौ गाइ चरावन, हौं बलि जाउँ निछनियाँ।
मो कारन कछु आन्यौ है बलि, बन–फल तोरि नन्हैया।
तुमहिं मिले मैं अति सुख पायौ, मेरे कुंवर कन्हैया।।''[28]

फिर गोचारण नित्य कर्म बन गया। वन में बलराम कृष्ण की तरह–तरह से हँसी उड़ाते हैं और अन्य साथी भी बलराम का हंसी उड़ाने में साथ देते हैं और मुझे घने जंगल में ले गये और फिर वहां से सब लोग भाग गये मैं डर से कांप रहा था। और डर के मारे भाग भी न सका। और वे आगे–आगे भागते रहे और मुझसे कहते रहे तू मोल का लिया हुआ है। इस बात की शिकायत कृष्ण अपनी माता यशोदा से इस तरह करते हैं –

''मैया बहुत बुरो बलदाऊ।
कहन लग्यौ बन बड़ौ तमासौ, सब मौड़ा मिलि आऊ।
मोहूँ कौ चुचकारि गयो लै, जहाँ सघन बन झाऊ।
भागि चलौ कहि गयो उहाँ तै, काटि खाइ रे हाऊ।
हौ डरपौ कापौ अरू रोवौ कोउ नहिं धीर धराऊ।
थरसि गयौ नहि भागि सकौ, वै भागे जात अगाऊ।
मोसौ कहत मोल कौ लीनो, आपु कहावत साऊ।
सूरदास गल बड़ौ चबाई, तैसेहिं मिले सखाऊ।।''29

ऐसे अनेक प्रसंगों में सूर ने सूरसागर में संयोग वात्सल्य रस की अभिव्यक्ति की है। जो हमें आज भी सभी के घरों में देखने को मिल जायगी। इस तरह सूर के वात्सल्य रस की उपयोगिता आज भी उपयोगी बनी हुई है।

वियोग वात्सल्य रस :–

वियोग वात्सल्य रस का प्रारम्भ उस समय से होता हैं, जब अक्रूर मथुरा से कृष्ण को लेने के लिए आते हैं। ज्योंहि कृष्ण इस बात का निश्चय कर लेते हैं, कि उन्हें मथुरा जाना है, त्योंही सम्पूर्ण वृन्दावनवासियों पर, ऐसा प्रतीत होता है, मानो पहाड़ टूट पड़ा हो। बालक कृष्ण के प्रति माँ के हृदय में कितना प्रेम है, यह वियोग वात्सल्य में ध्वनित होता है। यशोदा जी के मातृ हृदय की सबसे अधिक आकर्षणमयी व्यंजना कृष्ण के मथुरा चले जाने पर हुई है। अक्रूर मथुरा से कृष्ण और बलराम को लेने आये हैं। कंस ने उन्हें धनुषयज्ञ देखने के लिए बुलाया है। यशोदा जी पुत्रों के मथुरागमन की बात सुनते ही व्याकुल हो जाती है, वह कहती है –

''मेरी माई निधनी कौ धन माधौ।
बरंबार निरखि सुख मानति, तजति नहीं पल आधौं।
छिनु–छिनु परसति अंकम लावति, प्रेम प्रक ति है बाधौ।

**x x x**

करिहैं कहा अक्रूर हमारौ, दै है प्रान अबाधौ।
सूरस्याम घन हौ नहिं पठवों, अवहिं कस किन बांधौ।।''[30]

माता यशोदा कृष्ण के वियोग से व्याकुल हो उठती हैं, सर्वप्रथम वे कृष्ण से न जाने के लिए कहती हैं, अक्रूर के कृत्य के लिए उनकी भर्त्सना करती है –

''मोहन इतौ मोह चित धरियै।
जननी दुखित जानि कै कबहूँ, मथुरा गमन न करियै।
यह अक्रूर क्रूर कृत रचिकै, तुमहि लेन है आयौं।
तिरछे भये काम कृत पहिले, विधि यह ठाट बनायौ।।''[31]

जब यशोदा जी को इस बात का आभास हो जाता है कि कृष्ण अक्रूर के साथ अवश्य चले जायेंगे, तो वे हताश होकर कहने लगती हैं। कृष्ण के चले जाने का वियोग उनके मन में होने लगता हैं –

''जसोदा बार–बार यौं भाखैं।
है कोउ ब्रज मैं हितू हमारो चलत गुपालहिं राखै।।
कहा काज मेरे छगन गगन, कौ, न प मधुपुरी बुलायौ।
सुफलक सुत मेरे प्रान हरन कौं, काल रूप हैं आयौ।।
बरू यह गोधन हरौ कंस सब, मोहिं बँदि लै मेलौ।
इतनोई सुख कमल नयन मेरी अँखियनि आगै खेलौ।।''[32]

सूर काव्य का महत्वपूर्ण अंश वात्सल्य वियोग है, निःसंदेह सूर ने मात हृदय पाया था, तभी कृष्ण के वियोग में माता यशोदा के एक–एक क्षण का लेखा–जोखा सूर ने चित्रित किया है, नन्द कृष्ण को मथुरा से लाने के लिए गये हैं, माता यशोदा नित्यप्रति उनकी प्रतीक्षा करती हैं –

''बार–बार मग जोवति माता। व्याकुल बिनु मोहन बल भ्राता।।''[33]

नन्द मथुरा से लौट कर आ रहे हैं, दूर से ही माता यशोदा ने नन्द को देखा है, प्रेम विह्वल माता यशोदा को इतना धैर्य कहाँ कि वे नन्द धाम में ही प्रतीक्षा करें, वे दौड़कर आगे मिलने के लिए जाती हैं। इस भाव में वियोग वात्सल्य रस की अनुभूति स्पष्ट दिखाई देती हैं –

''नदहिं आवत देखि यशोदा, आगैं लैन गई।
अति कातूर गति कान्ह लैन कौं, मन आनन्न भई।।''[34]

परन्तु नन्द को अकेला आते हुए देखकर माता–यशोदा पछाड़ खाकर गिर पड़ती है, फिर नान प्रकार से नन्द को जली–कटी सुनाती हैं, उनसे अपशब्द कहती हैं, धिक्कारती है, भर्त्सना करती हैं। यहाँ पर भी वात्सल्य रस का भाव हैं –

''स्याम राम मथुरा तजि, नँद ब्रजहिं आए।
बार–बार महरि कहति, जनम धिक कहाए।।
कहूँ कहति सुनी नहीं, दसरथ की करनी।
यह सुनि नंद व्याकुल हैं, परै मुरछि धरनी।।''[35]

यही नहीं, यशोदा नन्द से यहाँ तक कहने लगती हैं, कि तुम पलट कर गोकुल में कैसे आ गये हो, वे नन्द को बार–बार उनके लौट आने के लिए धिक्कारती हैं और कृष्ण के प्रति अपने वात्सल्य स्नेह को रोक नहीं पाती –

''उलटि पग कैसे दीन्हौं नन्द।
छाँड़े कहाँ उभे सुत मोहन, धिक जीवन मतिमन्द।।
कै तुम धन जीवन मद माते, कै तुम छुटे बंद।।''[36]

यहीं नहीं, यशोदा ने कथनों में वियोग वात्सल्य की पराकाष्ठा हैं, उनके कथनों में नन्द के प्रति व्यंग्य हैं, तथा धिक्कारने तक को तैयार हो जाती हैं –

''जासुदा कान्ह कै बूझै।
फूटि न गई तुम्हारी चारौं, कैसे मारग सूझै।।
इक तौ जरी लात बिनु देखे, अब तुम दीन्हौ फूँकि।
यह छतिया मेरे कान्ह कुंवर बिनु, फटि न भई द्वै टूक।।''[37]

कृष्ण की प्रिय वस्तुओं को देखकर यशोदा भी अधिक करूणा से अशांत हो उठती हैं। यदि मथुरा की ओर जाता हुआ काई पथिक दिखाई दे जाता है, तो उससे कहने लगती हैं। यहाँ पर भी वियोग वात्सल्य रस का ही भाव हैं –

''जद्यपि मन समुझाावत लोग।
सूल होत नवनीत देखि मेरे, मोहन के मुख जोग।।
प्रातकाल उठि माखन रोटी, को बिनु अंकम दैहैं।

को मेरे वा कान्ह कुँवर कौं, छिनु–छिनु अंकम लैहै।
कहियौ पथिक जाइ, घर आबहु, रामक भण दोउ भैया
सूर स्याम कत होत दुखारी, जिनके मौसी मैया।।''[38]

यशोदा का दैन्य–भाव और वियोग वात्सल्य रस का प्रस्फुटन निम्न पद में कितने मार्मिक ढंग से हुआ है –

''सन्देसो देवकी सों कहियो।
हौ तौ धाइ तिहारे सुत की, दया करत ही रहियौ।।
जदपि टेव तुम जानतिं उनकी, तऊ मोहिं कहि आवै।
प्रात होत मेरे लाल लड़ैतैं, माखन रोटी भावै।।
X X X
सूर पथिक सुनि योहिं रेनि दिन, बढ़यौं रहत उर सोच।
मेरौ अलक लड़ैंतौ मोहन हैं है करत संकोच।।''[39]

इस प्रकार के अनेक पद सूरसागर में बिखरे हैं, जो वियोग–वात्सल्य से अनुप्रेरित हैं। डॉ. श्रीनिवास शर्मा ने हिन्दी काव्य में वात्सल्य रस नामक ग्रंथ में वियोग वात्सल्य के पदों की संख्या 89 बताई हैं। वियोग वात्सल्य के पदों को हम निम्न चार रूपों में विभाजित कर सकते हैं –

1. कृष्ण से मथुरा गमन के समय के पद।
2. मथुरा में कृष्ण के रहने के समय के पद।
3. मथुरा से लौटते हुए समय के पद।
4. करूण वियोग के पद।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि सूर ने अद्वितीय कल्पनाशक्ति एवं अन्तर्भेदनी दृष्टि पायी थी, उन्होंने वाल्यास्था, शैशवावस्था, एवं किशोरावस्था का कोई भी कोना अछूता नहीं छोड़ था। डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सूर के वात्सल्य वर्णन की प्रशंसा में उचित ही लिखा हैं –

''यशोदा के वात्सल्य में सब कुछ है, जो माता शब्द को इतना महिमामय बनाये हुए हैं। यशोदा के बहाने सूरदास ने मातृ–हृदय का ऐसा स्वाभाविक, सरल एवं हृदयग्राही चित्र खींचा है कि आश्चर्य होता है। सूरदास जहाँ पुत्रवती जननी के प्रेम पोषक हृदय को छूने में समर्थ हुए हैं, वहाँ वियोगिनी माता के करूण–विगलित हृदय को छूने में भी समर्थ हुये हैं।''[40]

* सहा. प्रा. हिन्दी, ठा. छेदीलाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय जांजगीर (छ.ग.)

## संदर्भ ग्रंथ


1. सूरदास – आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृष्ठ – 104
2. सूरदास – प्रो. राकेश, पृष्ठ – 50 अभय प्रकाश मंदिर आगरा, 1996
3. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 109
4. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 110
5. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 110
6. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 110
7. सूर के पात्रों का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन – डॉ. रावेन्द्र कुमार साहू, पृष्ठ – 88
8. सूर के पात्रों का मनोवैज्ञानिक अनुशीलन – डॉ. रावेन्द्र कुमार साहू, पृष्ठ – 88
9. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 111
10. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 112
11. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 112
12. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 113
13. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 115
14. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 222
15. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 192
16. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 193
17. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 192
18. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 120
19. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 121
20. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 269
21. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 329
22. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 334
23. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 411
24. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 412
25. सूरदास – सं. हरबंशलाल शर्मा, पृष्ठ – 126
26. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 413
27. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 414
28. सूरसागर – सूरदास दशम स्कंध पद – 418

42–53. सूरदास – प्रो. राकेश, पृष्ठ – 57 – 59